एक शहर मर गया ।

-- लीना मेहेंदले

सोलहवीं सदी ने अंगडाई ली। उसकी नजर पडी सह्याद्री के जंगल की एक बस्ती पर। सदी ने कहा-- आनेवाले दिनों में यहाँ कुछ नया होगा।

बस्ती से पूरब एक घना जंगल था। पश्चिम की तरफ थे खेत। वहाँ अधिकतर बाजरा, थोडी अरहर, कभी चना, कभी तिल उगाया जाता था। मेडों पर किसी ने आम, किसी ने इमली, किसी ने सागवान और किसी ने बबूल-नीम लगा रखे थे। लेकिन उन पर पूरी बस्ती का सांझा माना जाता था। जिसे घर में चटनी के लिये इमली चाहिये हो, रमई काका के मेंड से उठा लाये, जिसे नीम का दातुन करना हो, आगे पसीरा चाची के खेत में चला जाये। सब्जीयाँ और फूल खेत में नही उगाये जाते थे। बस्ती की हर घर के अगल बगल ये लगे हुए थे और उन पर भी गांव का सांझा माना जाता था।

बस्ती की असल संपत्ति तो जंगल थी। खास कर बढई और चमारों के लिये। खेत के लिये हल बनना है या घर में बिछाने के लिये चारपाई, तो जंगल से लकडी लाकर ये काम संपन्न होते। मेरे जानवर की खाल को हर्रे के पानी से धोधोकर तैयार किया जाता। वे हर्रे भी जंगल में ही थे। बस्ती के चमार भी चमार नही, कलाकार थे। उनके बनाये चप्पलों की खरीदारी के लिये दूर-दूर से व्यापारी आते थे। हरिया चमार को चार कोस दूर देश के राजा ने अपने दरबार में बुलाकर खास सम्मान किया था। तब हरिया की उमर रही होगी पच्चीस-सताईस वर्ष। राजा ने पूछा था- चप्पलों पर इतनी मेहनत, इतनी कशीदाकारी कैसे करते हो? तुम्हारी चप्पलें इतनी मुलायम हैं मानों कोई हल्के गरम कपडे से पैरों को धीरे धीरे दबा रहा हो। यह कला कहाँ सीखी? हरिया ने एक पल आंखें मूंदी तो जंगल नाच उठा था आंखों के सामने। हरिया ने उत्तर दिया- महाराज, हमारे जंगल में हर्रे के पेड हैं। उनके पास हम रोज जाते हैं। वही हमें सिखाते हैं कि चमडे को कैसे नर्म मुलायम बनाया जाय। राजा ने कहा- तो ध्यान रहे कि तुम्हारा जंगल सदा हरियाला रहे।

इस बात को हुए बीस पावस ऋतु बीत गए हैं। आज हरिया बस्ती के सबसे पुराने आम के नीचे बैठा है। उसने बस्ती को यहाँ इकट्ठा होने के लिये कहा है। अभी लोगों के आने में देर है। हरिया मन ही मन अपने शब्दों को उलट-पुलट कर देख रहा है। वह क्या कहना चाहता है? क्या वह खुद ठीक से समझ रहा है? क्या गांववालों को समझा पायगा? कि अब बस्ती के लोग बढ रहे हैं। खेत की फसल कम पड रही है। जंगल से जो कंद मूल, करौंदे, जाम, महुआ, गूलर आदि आते थे वे भी कम हो रहे थे। ऐसा नहीं कि गांववाले इसे न समझते हों। इसी आम के नीचे बैठ कर यही चर्चा कई बार हो चुकी है। हरिया आज नया क्या कहने वाला है? उसे स्वयं ही पता नही।

गाँववाले जमा हुए तो हरिया ने उठकर पहले अपने बूढे बाप के और फिर रामधारी बाबा के चरण छुए। अपनी जगह वापस आते आते वे सारे शब्द भूल गए जो उसने इतनी देर से मन में रखे थे भूमिका के लिये। अब बिना किसी भूमिका के उसने घोषणा की- मैं बस्ती छोडकर जा रहा हूँ। इस गांव की जमीन, खेत और जंगल अब कम हो रहे हैं। लोग बढ रहे हैं। हमें नई जमीन देखनी होगी, नया गांव बसाना होगा। कौन कौन चलेगा मेरे साथ?

जाने की तैयारी पूरी हो चुकी थी। हरिया को ही मुखिया मान लिया गया था। कुल चालीस परिवार जा रहे थे जिसमें तेईस तो चमारों के ही थे। वे अपने साथ पशु भी ले जा रहे थे। इसका मतलब था कि आने वाले दिनों में उन्हें पशुपालन और चरवाहे के काम भी सीखने थे। सात किसान परिवार थे। पांच बढई। बाकी और और लोग।

रात को मधुकर ने हरिया को बुलाया -- मेरी अम्मां ने तुमसे मिलने को कहा है हरिया। मधुकर गांव का वैद था। उसके पिता कई वर्ष पहले मर चुके थे। अम्माँ ने ही उसे पाला पोसा था। वैदकी की सारी बातें उसे सिखाई थी। गांव में किसी को बुखार हो जाय, सांप-बिच्छू काट ले, गिर कर चोट लगे, सब मधुकर की अम्माँ से, और अब मधुकर से पूछते थे। दूर दूर की बस्ती से भी लोग पूछने आते थे। कभी अपने बिमार पशु को ले आते थे।

ऐसी मधुकर की अम्माँ ने बुलाया है तो जरूर कोई खास बात होगी। हरिया तुरंत उठकर मधुकर के साथ चल पडा।

एक दिये की लौ में मधुकर की अम्माँ अपने चारों ओर दवाई की पोटलियाँ बिछा कर बैठी थी। हरिया के आते ही कहा- हरिया तू बस्ती से बाहर जाकर दूसरा गांव बसाने की बात कह रहा है?

हाँ मधुकर की अम्मां। याद है एक बार अपने गांव में नट आया था। बता रहा था कि कैसे पछरिया गांव से कुछ लोग चले गए थे अलग बस्ती बसाने। हमारी बस्ती भी तो ऐसे ही किसी ने आकर बसाई होगी। मैं बस्ती से बाहर जानेकी बात कह रहा हूँ क्यों कि अब अपना जंगल और खेत पूरे नही पड रहे हैं।

तो ठीक है। तुम्हारे लिये ये जडी-बूटियाँ अलग कर रही हूँ। दूसरा गांव बसाएगा तो वहाँ के जंगल में इन्हें ढूँढकर पहचान करनी पडेगी। वरना गाहे-बगाहे बिमार पडो, पशु मरने लगे, तो तुम सब क्या करोगे?

हरिया की आंखों के सामने अपने अगले बीस वर्ष कौंध गए। एक दूसरा ही विचार उपजने लगा।

अम्मां, रूक जाओ। ये सारी जडी और लत्तर यहाँ मधुकर के लिये रख दो। तुम भी हमारी टोली के साथ चलो।

ये तू क्या कह रहा है हरिया? मधुकर अकेला पड जायगा।

नही अम्मां। उसने अपने लिये किसी को ढूँढ लिया है। क्यों रे मधुकर, तेरा कोयली के साथ नही चल रहा है? फिर तुम दूसरी झोंपडी में चले जाओगे। अम्मां अकेली हो जाएगी। तो क्यों न हमारे साथ चले? गांव की वैदकी तू करेगा। हमारी नई बस्ती की वैदकी अम्मां करेगी।

जाने की तैयारी के लिये पंद्रह दिन तय हुए। दूसरे दिन मधुकर की अम्मां उसे जंगल में ले गई। वहाँ

पानी के तीन-चार सोते थे। उन्हीं में से एक को पार करके करौंदे के झुण्ड तक आये। उससे बहुत आगे बूढा बरगद था। बीच में एक अनचिन्हे पौधे का झुरमुट बना हुआ था। उसमें लुभावने पीले फूल लगे थे।

अम्मां झुरमुट के बीचोबीच बैठ गई और बूढे बरगद को हाथ जोडे। फिर मधुकर से कहने लगी।

सुन, ये पुरानी कहानी है। तब मेरे बाबा जीवित थे और वैदकी करते थे। छोटी वयस से ही मैं उनके साथ जंगल में आकर जडी बूटी पहचान ने लगी थी।

एक बार गांव में विचित्र महामारी आई। लोगों के बदन तपते थे, उलटी होती थी नाक बहने लगती

थी। फिर लोग मर जाते। एक एक कर तेईस लोग इसी बिमारी से मर गए। मेरे बाबा को दुहाई देने लगे।

तब बाबा इस बरगद के पास आए। हाथ जोड कर प्रार्थना की। कहा -- तुम न जाने कितनी पीढियों को देख चुके हो। उनके रोग और शोक संताप को भी देखा है। तो फिर तुम्हारी वृक्ष जाति के पास जो ज्ञान का भंडार है उसे खोलो और मुझे बताओ कि इस बिमारी पर मैं कौन सा उपाय करूँ। यह महामारी रही तो एक एक करके हमारे सारे लोग मर जायेंगे।

मैं तुम्हारे पास प्रति दिन आऊँगा। तुमसे उपाय पूछने। यह जंगल तुम्हारा है और यह बस्ती भी तुम्हारी है। इसे बचाने का उपाय तुम्हें ढूँढना होगा।

तो तुम्हारे बाबा बरगद के साथ बात कर सकते थे? फिर क्या हुआ? मधुकर ने अचरज से पूछा।

बाबा कहते हैं कि उस दिन बरगद ने सारे पेडों से बात की। यह बिमारी क्या है? हमारे बस्ती के मनुष्यों को क्यों लग रही है? इसका उपाय करने के लिये किस पेड के पास क्या क्या प्रभावी तंतु हैं?

उस दिन जंगल के सभी पेड पौधों ने अपने अपने ज्ञान भंडार में झांक कर देखा। किसी के पास पचास वर्षों का भंडार था तो किसी के पास सौ वर्षों का। बरगद खुद भी केवल अस्सी नब्बे वर्ष का था। लेकिन तब यहाँ एक ढाई सौ वर्ष पुराना पेड था। उसने अपनी परते पलट

कर देखीं। वहाँ कहीं पर इस बिमारी की जानकारी थी। फिर उसी पेड ने सुझाया कि किस किस पेड पौधे को अपना कौन कौन सा तंतु देना होगा ताकि एक नई जाति की पौध उग सके। वही पौध इस बिमारी का उपाय है।

उसके बाद पंद्रह दिनों में ही यह झुरमुट उग आया जहाँ हम बैठे हैं। इसी की टहनी गूदे से बाबा ने उस भयंकर महामारी का सामना किया था।

मधुकर अवाक् सुन रहा था। अम्माँ बताती रहीं।

तबसे बाबा की वैदकी की कथा दूर दूर तक फैल गई। आज भी जो लोग मेरे पास आते हैं वे मुझे बाबा मानकर ही आते हैं।

लेकिन वह महामारी? मैंने तो कभी गाँव में कोई महामारी नही देखी है। मधुकर ने पूछा-

हाँ, वह महामारी फिर नही लौटी। बाबा के या मेरे जीवन काल में नही लौटी। लेकिन कौन जाने तुम्हारे जीवन काल में लौट आये। और अब यह हरिया मुझे दूसरी बस्ती में ले जा रहा है। तो कौन जाने वहाँ महामारी लौट आये।

लेकिन वहाँ के जंगल के पास ये पौधें नही हुए तो? इसीलिये तो तुझे यहाँ लाई हूँ। कि थोडे से बीज यहाँ से इकट्ठे करेंगे। उन्हें मैं नए जंगल में डाल दूँगी।

अम्माँ, केवल बीज नही डालना। किसी को यह समझा भी देना।

हाँ, रे। अब मुझे उस बस्ती के किसी छोटे मधुकर को तैयार करना पडेगा।

और अम्माँ, वह पुराना पेड कौन सा है जिसने बरगद के कहने पर अपनी परतों को खोल कर बिमारी की जानकारी दी थी?

वह पेड भी बाबा ने मुझे दिखाया था। लेकिन लगता है कि उसका कोई नाता बाबा से जुड गया होगा। बाबा की मृत्यु के बाद मैंने देखा कि धीरे धीरे वह पेड भी सूख गया। फिर एक बार जंगल में आग लगी थी तो उसमें झुलस कर मर गया था।

तो अब अपने जंगल में सबसे पुराना पेड कौन सा है?

एक तो यह बरगद ही है। लेकिन बाबा कहते थे कि चौथे सोते के पार का शीशम शायद सबसे पुराना है। उधर कुछ ओक हैं वे भी पुराने हैं।

बेटे, पुराने पेडों का विशेष ध्यान रखना। उन्होंने हमारी कई पीढीयाँ देखी होती हैं- उनके दुख दर्द, जरा, व्याधि की बातें पेडों के पास लिखी होती हैं। हम उनकी भाषा नही पढ पाते, वरना कितना कुछ जान सकते थे।

पचीस वर्ष बीत गए। हरिया को इसलिये यह गिनती याद है क्योंकि जब वे गांव से चले थे तो लखमना की गोद में दो माह का शिशु था। आज वही चंदर पचीस वर्ष का हो गया है। लखमना और दुलारी तो उसके माँ बाप ठहरे। लेकिन मधुकर की अम्मां ने भी उसे पाला पोसा है। जैसे किसन कन्हैय्या को जशोदा ने पोसा था। उसे जंगल ले जा जाकर वैदकी सिखाई है।

महामारी वाले पौधों का झुरमुट भी मधुकर की माँ और चंदर ने जंगल में खास तौर से जतन किया है।

चंदरपुर गांव बसाने के पहले हरिया, लखमना और मधुकार की अम्माँ ने आसपास कई कोसों का इलाका देख डाला था। फिर दो नदियों के संगम के पास यह जगह चुनी थी। चालीस परिवारों को बसाने लायक खुली जमीन तैयार करनी थी। कई पेड काटने थे। इस इलाके के राजा से मिलकर गाँव बसाने और खेती करने की आज्ञा लेने हरिया और लखमना गए। खेती की वसूली से राजा को कितना कर दिया जायगा और जंगल का कितना हिस्सा गाँव का माना जायगा, यह सब तय करने के बाद ही आज्ञा मिल पाई। लेकिन इतने भर से राजा संतुष्ट नही हुआ। उसने पूछा - तुम्हारे जो चालीस परिवार हैं, उनमें क्या हुनर है? हमारे राज्य के लिए तुम लोग किस काम आओगे? हरिया का कौशल फिर एक बार अपनी धूम मचा गया। उसने बडे जतन से बनाई चप्पलों की जोडी रानी के सामने रख दी। लखमना धान से महीन चिऊडा बनाता था। उसने भी अपनी पोटली राजा के सामने रखी।

हूँ, तेरे किसान और चमार बडे हुनरमंद लगते हैं। और कौन से हुनर हैं?

सुगीराम बढई है - बाँस का काम करता है। और एक बूढी अम्माँ है जो वैदकी जानती है - पेडों से बात भी करनी है। महामारी का इलाज ढूँढ लेती है।

तमाम चालीसों परिवारों का पूरा हालचाल जान लेने के बाद ही मंत्रीने उन्हें गांव बसाने का आज्ञापत्र दिया था। दो दिन लग गए थे, राजनगर में। अब तो गांव पूरी तरह बस गया है। परिवार भी बढकर तीन सौ हो गए। दूसरे बस्तियों के कई परिवार भी इधर आ गए। चंदरपुर धीरे धीरे एक व्यापारी केंद्र बन गया।

चंदर बारह साल का था तब की बात है। हरिया और मधुकार की अम्माँ को राजनगर से बुलावा आया था। चंदर भी साथ गया था। उधर एक गांव पडता था शिवापुर - वहाँ महामारी आ गई थी। दाने निकलते,

बदन तप जाता, फिर दाने फूटते थे, शरीर जलने लगता था और देखते देखते रोगी मर जाता। सारा खेल चार से आठ दिनों में खत्म हो जाता।

चंदर और मधुकर की अम्माँ ने आस पास के जंगल छान डाले थे। अम्माँ हर पुराने पेड के पास जाती - उसे बताती - रोगियों का पूरा ब्यौरा। हर शाम निराशा में सिर हिलाकर कहती देर लगेगी - किसी पेड को पता ही नही इस महामारी के विषय में।

लेकिन दो महीने में ही उन्होंने देखा - जंगल में नीम के कई नए पौधे उग आये थे। इन जंगलों में ये नये ही थे। क्या ये महामारी से छुटकारा दिलाएंगे? मधुकर की अम्माँ ने सारे रोगियों के लिए नियम बना दिया कि वे इन्ही पौधों के आसपास रहेंगे। धीरे धीरे महामारी का प्रकोप कम हुआ। तब से शिवापुर और चंदरपुर इलाके में नीम के पेड उगाने ओर बढाने का रिवाज चल पडा।

सत्रहवीं सदी ने अंगडाई ली। चंदर अब पचपन साल का था । रोज की तरह वह जंगल में आया था - वहाँ सबसे पुराना एक अगस्ति का पेड था। उसी के नीचे बैठकर चंदर उससे गांव का हालचाल सुनाता था।

पिछले दिनों से गांव में एक अजीब रोग छा गया था। रोगी के मुँह से लार टपकती थी - आंखें मटमैली हो जातीं - उनसे कीच निकलती। फिर हाथ-पैर कांपने लगते, फिर गर्दन हिलने लगती। आठ दस दिनों में रोगी कंपकंपी से जर्जर और ठंडा पडने लगता। फिर हिचकियों के बीच उसकी मृत्यु हो जाती। चंदर ने मधुकर की अम्माँ को मन ही मन हाथ जोडे और रोगियों का पूरा ब्यौरा अगस्ति के पेड को बताने लगा।

पांच दिन बाद पूर्णमासी थी। चाँद की रोशनी से अमृत बरस रहा था। उससे पुष्ट होकर हर पेड और पौधे का हर कण सचेतन हो रहा था। हवा में पेड झूम रहे थे, डोल रहे थे। उनके पत्तों के छोर से लहरियाँ फूट फूट कर वातावरण में बिखर रही थीं। धीरे धीरे ये लहरियाँ एक दूसरे में घुल मिल गईं और तमाम पेडों के बीच एक झनकार बनकर छा गईं। अब हर पेड एक दूसरे से बोल सकता था - एक दूसरे को समझ सकता था।

सबकी चेतना में एक ही प्रश्न था जो वे अगस्ति के पेडसे पूछना चाहते थे, क्यों कि वह आयु में सबसे बडा था। यह कौन सी महामारी है जो चंदर के लोमों और केशों से हमें पता चली? हमें कौन से नये पौधों का सृजन करना पडेगा? उसके लिये आवश्यक तन्तु किस किस पेड के पास हैं?

अगस्ती के साथ साथ जंगल में एक सोम का पेड भी लम्बी आयु का था। दोनों ने अपनी परतें खोलीं। इसी समय कोसों दूर स्थित पुराने पेडों से चलकर आ रही लहरियाँ भी उन्हें जानकारी दे रही थीं। तमाम जानकारी के एक एक चेतन बिंदु को हर पेड ने, हर पौधे ने छान डाला। उस जानकारी से तय हुए वे चार प्रभावी तंतु जो नये पौधे में डालने होंगे। वे तंतु चार अलग अलग किस्म के पेड पौधों से चुने गए थे। एक तंतु तो ऐसी छोटी घास का था, जो अगले पंद्रह दिन के बाद अगले वर्ष तक सो जानी थी।

अगस्ती के पेड ने आज्ञा दी - उन चार तंतुओं को लेकर नई घास की प्रजाति बनेगी। उसे जमीन से उगने में भी आठ-दस दिन लगेंगे। फिर उसे जानवरों से बचाते हुए बढाना पडेगा। इसकी जिम्मेदारी होगी बबूल की कंटीली झाडियों पर। एक महीने में वह घास पककर इन रोगी आदमियों को रोग मुक्त करने के लिए सहायक बनेगी। सोमवृक्ष ने इस घास को नाम दिया- असोका।

असोका घास ने अपने आस पास की दूसरी घासों से केवल उस चेतना की बात सुनी है। अगस्ती और सोम, दोनों पेड कब के ओझल हो चुके हैं। इसके अलावा कितने ही दूसरे

पेड और पक्षी और जानवर भी। खुद असोका भी अब तक ढाई सौ बार सोकर जाग चुकी है। यानि मनुष्य की भाषा में ढाई सौ वर्ष की हो गई है। उसने इतने वर्षों तक उस लार टपकाने वाली महामारी के विषाणुओं को रोक रखा है। लेकिन आखिर कब तक? उसके आस पास के बडी आयु वाले पेड कट रहे हैं। उनके पास जो जानकारियाँ हैं, उतनी रखने लायक परतें असोका के पास नही हैं - इसके लिये तो बडे बडे और पुराने वृक्षों की आवश्यकता है। उनकी परतों में ही लहरियों द्वारा लाई गई जानकारी सुरक्षित रह सकती है। इतनी छोटी सी बात को क्या मनुष्य प्राणी नही समझ सकता?

चंदरपुर गाँव में पिछले तीन सौ वर्षों में हजारों परिवर्तन हुए। लेकिन असल में उन्हें हजारो नही बल्कि एक ही परिवर्तन कहना ठीक रहेगा। वह ये कि चंदरपुर का बढ चढकर विस्तार हुआ। वह राजधानी का स्थान बना - यहाँ कई लडाईयाँ लडी गईं। व्यापार का केंद्र भी बना रहा। शिक्षा का भी। हर ओर से विस्तार - बस यही थी चंदरपुर की पहचान।

बीसवीं सदी ने अंगडाई ली। चंदरपुर अब देश का औद्योगिक केंद्र बन रहा था। राजकाज की भाषा यहाँ से बनकर दूर दूर तक बोली जाती थी। समाज व्यवस्था में कई परिवर्तन आए। अब राजा और राजपाट जैसा कुछ नही बचा। उसकी जगह लोकतंत्र आ गया था। घर बनाने के तरीके बदल गए। अब बाँस की झोपडियों की जगह ईंटों और सिमेंट के मकान बनने लगे। पगडंडियों और गधों की सवारी के रास्ते बदल कर कोलतार के पक्के रास्ते बनने लगे। जात पात व्यवस्था चरम सीमा पर थी। इसमें हरिया जैसे हुनरमंद चमार या सुगीराम जैसे बढई के हुनर की इज्जत नही थी। बल्कि चमडे का काम करने के कारण उन्हें नीच कहा जाने लगा था। सीखने के लिये लोग पेडों के पास नही बल्कि स्कूलों और कॉलेजों मे जाते थे। पेडों ने भी अब मनुष्य से बातें करना बंद कर दिया था। लेकिन पेडों के चेतना संगम में अब भी मनुष्य और पशु पक्षी के रोगों की चर्चा होती थी। रोग निवारक प्रजाति के लिये आवश्यक तंतुओं की छानबीन की जाती। जिन प्रजातियों कें पास वे तंतु होते, उन से उन्हें इकट्ठे कर नई प्रजाति पैदा की जाती। पेडों ने अपना धर्म नही छोडा था, लेकिन समस्या थी कि यह चेतना मनुष्य तक कैसे पहुँचाई जाये।

इक्कीसवीं सदी ने अंगडाई ली। चंदरपुर अब देश की तीसरी राजधानी कहलाने लगा - पिछली सदी में शिक्षा क्षेत्र का सबसे तेज दौर यहीं आया था। अब इन्फार्मेशन टेक्नोलॉजी में भी सबसे आगे चंदरपुर ही था। चालीस परिवारों से बसे चंदरपुर की लोकसंख्या अब हो गई थी चालीस लाख। दूर दूर तक जहाँ भी नजर जाती थी, कई मंजिले मकान, शॉपिंग मॉल, पक्के रास्ते, उन पर दौडती बसें, कार। समुद्र के अथाह प्रवाह की तरह आते जाते लोग। और

लोगों ने कहना शुरू किया - ओफ्फोह, जनसंख्या कितनी बढ गई है, वाहन कितने बढ गये हैं, लेकिन रास्ते अब भी वही, पचास वर्ष पुराने सँकरे रास्ते? अरे, कोई इन्हें चौडा तो करो।

महानगर पालिका की ऊंची अट्टालिका में मीटींग हुई - रास्ते चौडे करो - प्लान बनाओ। एस्टिमेट बनाओ।

नगर विकास विभाग के सर्वेयर दौडे - रास्तों की नाप जोत करो। गिनो पेड गिनो - कितने पेड काटने पडेंगे। गिनो जरा।

कुछ ही लोगों ने बात को ध्यान से सुना - क्या कह रहे हैं? पेड काटने पडेंगे? अरे, किस रोड के पेडों की बात रही है? उधर उस रोड की? लेकिन वहाँ तो कई सुंदर पुराने पेड है - हाँ, डेढ दो सौ वर्ष पुराने भी।

और इधर इस रोड पर भी? हाँ, कालेज रोड पर भी और तुकाराम पादुका रोड पर भी। अरे, इतने पुराने पेड भी काटेंगे?

इक्कीसवीं सदी के मनुष्य को अब पेडों से बात करना नही आता था लेकिन कई मनुष्यों को पेडों की चेतना से संवेदना आ जाती थी। वे कुछ कुछ महसूस करते थे। चंदरपुर में भी ऐसे कुछ लोग इकट्ठे हुए - उन्होंने कहा - पुराने पेड मत काटो।

फिर सभाएँ हुईं। थोडे नारे लगे। थोडे लेख छपे। लेकिन महानगरपालिका पर दबाव बढ रहा था - रास्ते चौडे करो - शहर में वाहन इतने बढ रहे हैं, उन्हें चलाने के लिए रास्ते चाहिये। पेडों की जमीन बेकार ही अडचन कर रही है। रास्ते दो, पेड नही, रास्ते दो, पेड नही।

कुछ लोगों ने फिर सुझाया - अरे, पेडों को काटने की बजाए इन्हें रोड डिवाइडर की तरह इस्तेमाल करो। उन्होंने महापालिका आयुक्त और पदाधिकारियों से मीटिंग की। लेकिन सबको रास्ते चौडे करने की जल्दी पडी थी।

एक एक कर चंदरपुर के सभी रास्ते चौडे हुए। एक एक कर सारे पुराने वृक्ष कट गए। उस एक वर्ष में चंदरपुर में करीब तीन हजार ऐसे वृक्ष कटे जो पचास वर्ष से भी अधिक आयु के थे। उन्हें काटकर जो रास्ते चौडे हुए उनकी कुल लम्बाई थी दो सौ किलोमीटर।

असोका और उस जैसे कई नन्हें घासों की कई प्रजातियाँ भी रास्ते के नीचे दब गई। उनपर रेत, मिट्टी, पत्थर, टार और सिमेंट की परतें बिछी। असोका का दम घुट गया।

सन् २०१० की मार्च की एक सुबह। चंदरपुर में लार टपकाने वाली महामारी एक बार फिर आई। लोगों के हाथ, पांव की अंगुलियों में कंपकंपी भर गई। फिर गर्दन कंपकंपाने लगी।

अस्पताल में रोगियों की संख्या बढने लगी। इस अजनबी रोग की रोकथाम के लिये दुनियाँ भर के वैज्ञानिक जुटने लगे।

उधर पक्षी जगत में भी खलबली मची। सतर्कता की सूचना फैली कि ऐसे रोगसे मरे व्यक्ती का शरीर इधर उधर पडा हो तो कोई पक्षी उस पर चोंच न मारे।

चंदरपुर में जो भी पेड पौधे बच गए थे, सबने जल्दी जल्दी अपनी लहरियों से दुबारा चेतना

संगम जमाने का प्रयास किया लेकिन अब वे एक दूसरे से काफी दूर दूर थे और अनुभव में छोटे। उनकी जानकारी की परतें सीमित थीं। कोई भी पेड या पौधा दुबारा असोका घास के सृजन की बात नही उठा पाया।

महामारी बढती गई - मुनष्य को खाती गई।

सन् २०११ की मार्च महीने की एक सुबह। आज चंदनपुर का हर मनुष्य या तो मर चुका था या शहर छोड कर भाग चुका था। चंदनपुर रह गया था खाली सिमेंट कांक्रीट के रास्तों का शहर।

हरिया का चंदरपुर मर चुका था।

कई वर्ष बीते। अब देशमे एक नई संस्था के चर्चे थे। जैवविविधता बचाओ जत्रा - अर्थात् जैबज। स्कूली बच्चों की प्रभात - फेरियाँ निकालना और उनके मार्फत देशके विभिन्न ठिकानोंमे जैवविविधताका अध्ययन करना, दुर्लभ प्रजातियों को तलाशना, इत्यादि इस संस्था के काम थे। उनको हर्रेकी भी तलाश थी।

एक लेखकके पांडुलिपी संग्रहमे हरियाकी कथा थी। उसका देहावसान हुआ तो उसके बेटे ने सारी पाण्डुलिपियाँ कबाडी को दे डाली। कबाडी की लडकी जैबज ग्रुपकी सदस्य थी। उसने सोचा ये कागज बेटी के लिए महत्त्वपूर्ण होंगे। इस तरह हरिया की कथा जैबज तक पहुँची।

फिर एक दिन रंगबिरंगी पोशाख पहने हजारों लडके-लडकियाँ चंदरपुरमे आये - जैसे हजारों तितलीयाँ। किसीके हाथ मे बैनर, तो किसीके हाथ मे चित्र, किसीके हाथ मे पौधा, किसीके हाथ मे पानी, किसीके हाथ मे कुदाल और फावडे।

दूर राजधानी के शहर से पुरातत्व अधिकारी भी आए। उन्होंने निशानियोंसे पहचाना - यही है पुराना चंदरपुर। यही है उसकी नगर-सीमा के निशान, करो शुरूआत।

ढोल-लेझिम के तालपर, एकसाथ पौधे लगाने का कार्यक्रम शुरू हुआ। बच्चोंने लाखो बीज बोए - हजारों पौधे लगाए। चंदरपुर शहर के बीचो - बीच जैबज के साथ आया इकलौता हर्रेका पौधा भी लगाया। और असोका? उसका पता नही चला।

पर यही पेड बडे होंगे और बहुत साल सृष्टी पर रहेंगे। सालों साल वें लोगों की बिमारियाँ देखेंगे। बिमारियोंकी दवाई जिन जिन पेड पौंधो के पास है उनकी जानकारी
ज्ञानतंतुमे इकठ्ठा करके रखेंगे। उनके चेतना-संगम होंगे। जब भी नई बिमारी या महामारी में जरूरत पडेगी, सारे पेड पौधे अपने प्रभावी तंतु देकर बिमारियों पर असर करनेवाली वनस्पतियाँ उगाएंगे। मनुष्य और प्राणियोंको बिमारीसे बचाने का पेड पौधोंका काम रुकेगा नही - चलता रहेगा।

लीना मेहेंदले, १५ सुनिती, जगन्नाथ भोसले मार्ग, मंत्रालय के सामने, मुंबई - 400021.